पटना के उच्च न्यायालय में

आपराधिक विविध संख्या - 17102/2023

जिला मधुबनी पुलिस थाना से उत्पन्न मामला बासोपट्टी पुलिस थाना कांड संख्या-3/2022

==========

1. कैलाश ठाकुर उर्फ कैलाश बिहारी ठाकुर पुत्र स्वर्गीय मथुरा ठाकुर निवासी ग्राम- जासो, थाना-बासोपट्टी, जिला -मधुबनी
2. राजन पांडे उर्फ राजन कुमार पांडे पुत्र बिनोद पांडे निवासी ग्राम- जासो, थाना- बासोपट्टी, जिला -मधुबनी
3. राजेंद्र ठाकुर पुत्र युगेश्वर ठाकुर निवासी ग्राम -जासो, थाना- बासोपट्टी, जिला- मधुबनी

.....याचिकाकर्ता गण

बनाम

1 बिहार राज्य

2 विकाश कुमार दास पुत्र किशुन दास निवास ग्राम-जासो, थाना- बासोपट्टी, जिला- मधुबनी ।

.....विरोधी पक्ष

==========

उपस्थिति:

याचिकाकर्ताओं के लिए	:	श्री बनवारी शर्मा, अधिवक्ता
	:	श्री सहजानंद शर्मा, अधिवक्ता
राज्य के लिए	:	श्री राजेंद्र नाथ झा, सहायक लोक अभियोजक
विपक्षी पार्टी संख्या 2 के लिए	:	श्री सुश्री वागीशा प्रज्ञा, अधिवक्ता
	:	सुश्री अंकिता रॉय, अधिवक्ता
	:	श्री बिनोद कुमार सिंह, अधिवक्ता

==========

याचिका - याचिकाकर्ताओं सहित ग्यारह अभियुक्तों के खिलाफ भारतीय दंड संहिता की धाराओं 323, 341, 379, 324, 325, 307, 504 और 506 तथा अनुसूचित जाति और

अनुसूचित जनजाति (अत्याचारों की रोकथाम) अधिनियम, 1989 की धाराओं 3(i)(r)(s)/3(2)(va) के तहत दर्ज एफ.आई.आर. को रद्द करने के लिए दायर की गई।

निर्णय - यदि आरोपों को सत्यता की जांच किए बिना सतही रूप से लिया जाए, तो आसानी से यह देखा जा सकता है कि भारतीय दंड संहिता की धाराओं 323, 341, 379, 324, 325, 307, 504, 506 और धारा 34 के तहत अपराध हुआ है। (पैरा 31)

SC/ST (POA) अधिनियम, 1989 के तहत अपराध बनाने के लिए यह जरूरी है कि यह आरोप हो कि अभियुक्त अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति समुदाय से नहीं है और उसने पीड़ित के खिलाफ यह अपराध इसलिए किया क्योंकि वह अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति से संबंधित है। अपराध को सार्वजनिक दृष्टि में भी घटित किया जाना चाहिए। हालांकि, एफ.आई.आर. में सभी विवरण नहीं हो सकते, फिर भी एफ.आई.आर. को आरोपपत्र के साथ पढ़ते हुए उसमें आरोपित अपराध के सभी तत्वों का उल्लेख होना चाहिए, अन्यथा आपराधिक कार्यवाही रद्द की जा सकती है। इसी तरह, आपराधिक शिकायत के मामले में शिकायत, और उसके गवाहों के बयान, जो धारा 200 सीआर.पी.सी. के तहत पूछताछ के दौरान दिए गए हैं, को आरोपित अपराध के सभी तत्वों को पूरा करना चाहिए, अन्यथा आपराधिक कार्यवाही का जारी रहना अदालत की प्रक्रिया का दुरुपयोग और न्याय का हनन होगा। (पैरा 42)

सूचना देने वाले पर इस अपराध का आरोप लगाया गया है क्योंकि वह हरिजन या अनुसूचित जाति का सदस्य है, और उसका अपमान करने की मंशा से यह अपराध हुआ है और यह अपमान उसके गांववालों की सार्वजनिक नजरों में हुआ। अत: उपरोक्त आरोपों के आधार पर एससी/एसटी एक्ट के तहत अपराध का प्राथमिक दृष्टिकोण से गठन हुआ है। (पैरा 43)

यहां तक कि यदि शिकायतकर्ता की ओर से एफ.आई.आर. दर्ज करने में कोई दुर्भावनापूर्ण या दूसरी मंशा का आरोप है, जो कि शिकायतकर्ता और अभियुक्तों के बीच शत्रुतापूर्ण संबंधों के कारण हो, तो यह याचिकाकर्ताओं की मदद नहीं कर सकता है। इस प्रारंभिक चरण में केवल जांच के बाद ही अदालत इस तरह के आरोपों की जांच कर सकती है। केवल पिछले मुकदमे या पक्षों के बीच शत्रुतापूर्ण संबंध एफ.आई.आर. को रद्द करने के लिए पर्याप्त कारण नहीं हो सकते। जांच को जारी रखना आवश्यक है ताकि आरोपित अपराध की सच्चाई सामने आ सके। (पैरा 45)

याचिका खारिज की जाती है। (पैरा 46)

पटना उच्च न्यायालय का निर्णय/आदेश

==========

कोरमः माननीय न्यायमूर्ति श्री जितेंद्र कुमार

सीएवी निर्णय

तिथि : 07.01.2025

दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के तहत वर्तमान याचिका को बासोपट्टी थाना कांड संख्या- 03/2022 की प्रथम सुचना प्रतिवेदन को रद करने के लिए दायर की गई है जो 03.0122 को याचिकाकर्त्तों सहित गयारह आरो-पियों के खिलाफ भारतीय दण्ड सं हिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 323, 341, 379, 324, 325, 307, 504, और 506 और अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम, 1989 की धारा 3 (आई) (आर) (एस)/3 (2) (वी. ए.) के तहत दंडनीय अपराध के लिए पंजीकृत है।

2. सूचक की लिखित प्रतिवेदन से अभियोजन पक्ष का मामला यह है कि 29.12.2021 को 7.00 बजे सुबह, उसे आरोपी विनोद पांडे किसी श्रम कार्य के लिए ले गया था। उनके निर्देश के अनुसार, सूचक ने अपने खेत से घास काट ली। इसके बाद सूचक को 1 बजे अप्रहन मे आने के लिए कहा गया। अपने श्रम शुल्क के लिए जब सूचक आरोपी विनोद पांडे के पास गया, तो उसे अपना शौचालय साफ करने के लिए कहा गया और तभी उसे अपना श्रम शुल्क मिलेगा। लेकिन सूचक ने शौचालय साफ करने से इनकार कर दिया। तब आरोपी विनोद पांडे ने उससे कहा कि वह उसका श्रम शुल्क नहीं देगा क्योंकि उसने हरिजन होने के बावजूद शौचालय की सफाई नहीं की है। दोनों के बीच तीखी नोकझोंक हुई। इस बीच, विनोद पांडे का पुत्र राजन पांडे उसके पास आया और उसे, मादर चोद हरिजन शब्द का इस्तेमाल करते हुए गाली देने लगा और पूछा कि वह उनके पिता के आदेश की अवज्ञा करने की हिम्मत कैसे कर रहा है। उसने बचे हुए भोजन जिसे वह अपने हाथ में ले जा रहा था के साथ थाली को भी उनके चेहरे पर फेंक दिया, और उसने उसे नीचे धकेल दिया। बिनोद पांडे

और राजन पांडे दोनों ने हरिजन शब्द का उपयोग करते हुए उन्हें गाली देना जारी रखा। हल्ला सुनकर भोगेंद्र मंडल, राजेंद्र मंडल और अन्य लोग वहाँ आ गए। इन लोगों को देखकर दोनों आरोपी अपने घर वापस चले गए। सूचक बिना श्रम शुल्क लिए अपने घर लौट आया।

3. आगे यह आरोप लगाया गया है कि शाम 7 बजे आरोपी बीरेंद्र झा अपने हाथ में हथियार लेकर विनोद पांडे के घर आया और गैरकानूनी तरीके से इकट्ठा हुआ और लूटपाट करने के इरादे से सूचक के घर की ओर बढ़ा। आरोपी ऋषि ठाकुर के हाथ में लोहे की छड़ थी, अभय ठाकुर उर्फ छोटू और राजेंद्र ठाकुर के हाथों में लाठी थी, राकेश ठाकुर के हाथ में लोहे की छड़ थी, केशव ठाकुर के हाथ में भी छड़ थी, कैलाश ठाकुर के हाथ में लाठी थी, राजू ठाकुर के हाथ में पिस्तौल थी और मुकेश ठाकुर के हाथ में लाठी थी। वे सूचक के घर पहुंचे। बीरेंद्र झा और बिनोद पांडे ने उनके घर में लूटपाट शुरू कर दी। बीरेंद्र झा ने उनसे उस दिन यह भी कहा कि हरिजन होने के बावजूद, वह विनोद पांडे के आदेश की अवज्ञा करने का साहस कर रहे थे। उसने उसदिन यह भी कहा कि वह यहाँ से भागने के लिए मजबूर होगा। सूचक ने आरोपी व्यक्तियों को उसके घर में प्रवेश करने का का विरोध किया, जिसके बाद आरोपी विनोद पांडे और राकेश कुमार ने उसके चेहरे पर थूक दिया और उसे गाली दी और धमकी दी कि वह घमंडी हो गया है और उसे जीने नहीं दिया जाएगा। उस समय तक आरोपी सुकमारी देवी, राज कुमारी देवी, बिमला देवी, मालती देवी, मंडी मंडल, योगेंद्र मंडल भी घटना स्थल पर पहुंच गए और आरोपी व्यक्तियों को सूचक के घर में प्रवेश करने से रोक दिया। लेकिन, आरोपी विनोद पांडे, राजेंद्र ठाकुर और बीरेंद्र झा ने अपने आदमियों को इन व्यक्तियों पर भी हमला करने के लिए प्रोत्साहित किया, जो हरिजन को बचाने आए थे, जिसके बाद आरोपी राजन पांडे ने बिमला देवी के सिर पर हमला किया। हालांकि, बिमला देवी सिर पर हमले से बच गईं लेकिन उनके कंधे पर चोट लगी और उनका कंधा टूट गया। सुकमारी देवी पर राकेश ठाकुर ने लोहे की छड़ से हमला किया जिसके परिणामस्वरूप उनका हाथ टूट गया। ऋषि ठाकुर ने सुकमारी देवी की कमर पर हमला

किया। मालती देवी के सिर पर राजेंद्र ठाकुर ने हमला किया था। बिनोद पांडे ने सूचक पर हमला किया जिससे वह घायल हो गया और कैलाश ठाकुर ने राज कुमारी देवी पर हमला किया और उनसे उनके पति नाग मंडल के हत्या करने के बारे में पूछा गया। लेकिन सौभाग्य से नाग मंडल अपने घर पर नहीं थे। बीरेंद्र झा और मंगल भी उनके मन में भय पैदा करने के लिए अपनी पिस्तौल दिखा रहे थे। हल्ला के कारण कई लोग वहां भी आए लेकिन इन लोगों को देखकर आरोपी भाग गए। जाते समय, विनोद पांडे पैसे और 25,000/- मूल्य के गहने वाला डिब्बा भी ले गए। इसके बाद, घायलों को उनके इलाज के लिए बासोपट्टी प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र ले जाया गया। उनमें से कुछ गंभीर रूप से घायल हो गए थे, इसलिए उन्हें मधुबानी रेफर कर दिया गया, जहां उनका इलाज चल रहा है। इस तरह के व्यवहार के कारण, सूचक ने लिखित शिकायत कुछ विलंब से दाखिल किया था। कुछ देरी के साथ बयान दिया गया है।

4. उक्त लिखित प्रतिवेदन के आधार पर, याचिकाकर्ताओं सहित ग्यारह अभियुक्तों के खिलाफ 2022 का बासोपट्टी थाना मामला संख्या- 3/2022 दर्ज किया गया था। इसलिए, इस प्रथम सूचना प्रतिवेदन से आहत होकर, याचिकाकर्ताओं ने वर्तमान प्रथम सूचना प्रतिवेदन को रद्द करने के लिए वर्तमान याचिका दायर की गई है।

5. मैंने याचिकाकर्ताओं के लिए विद्वान अधिवक्ता, राज्य के लिए विद्वान अतिरिक्त लोक अभियोजक और विरोधी पक्ष संख्या- 2 (सूचक) के लिए विद्वान अधिवक्ता को सुना।

6. याचिकाकर्ताओं के विद्वान अधिवक्ता प्रस्तुत करते हैं कि याचिकाकर्ता निर्दोष हैं और उन्हें गलत तरीके से फंसाया गया है। वह आगे प्रस्तुत करता है कि लिखित प्रतिवेदन में लगाए गए अनियंत्रित आरोप को देखते हुए भी याचिकाकर्ताओं के खिलाफ कोई अपराध नहीं बनता है। इसलिए, न्यायालय की प्रक्रिया के दुरुपयोग को रोकने और न्याय के

उद्देश्यों को पूरा करने के लिए याचिकाकर्ताओं के खिलाफ प्रथम सूचना प्रतिवेदन रद्द किए जाने योग्य है।

7. वह आगे प्रस्तुत करते हैं कि आरोपित प्रथम सूचना प्रतिवेदन विकास कुमार दास द्वारा दर्ज बासोपट्टी पुलिस थाना काण्ड संख्या- 03/2022 को याचिकाकर्ता संख्या-2 की मां द्वारा दर्ज बासोपट्टी थाना कांड संख्या- 02/2022 के मद्देनजर प्रतिशोध लेने के गुप्त उद्देश्य से दुर्भाग्यपूर्ण तरीके से दायर किया गया है, जिसमें सूचक और अन्य सह आरोपियों के खिलाफ भारतीय दंड संहिता की धारा 323, 341, 379, 354(बी), 307, 504, 506 के साथ धारा 34 के तहत दंडनीय अपराध किया गया है। बासोपट्टी थाना कांड संख्या 02 का विस्तार से बताते हुए विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि एक नागेंद्र मंडल 2021 के पंचायत चुनाव में मुखिया का उम्मीदवार था और चुनाव हार गया था, और इसके कारण वह और उसके समर्थक जितेंद्र ठाकुर और अभिनय ठाकुर उसके पति को मारने की धमकी दे रहे थे। दिनांक 29.12.2021 को प्रखण्ड प्रमुख का चुनाव हुआ और शाम 7 बजे आरोपी नागेंद्र मंडल, संजीव कुमार, सुकमारी देवी, बिंदे दास, विकास दास, योगेंद्र मंडल, श्रीमंडल, महेंद्र मंडल, राजेंद्र मंडल, विनोद मंडल, मेदी मंडल, जितेंद्र ठाकुर और अभिनय ठाकुर प्रखण्ड प्रमुख के चुनाव में अपने उम्मीदवार की जीत का जश्न मनाते हुए सूचक के दरवाजे पर आए और नागेंद्र मंडल ने गाली-गलौज करना शुरू कर दिया और सूचक के विरोध पर बहस हुई जिसमें अपराध किया गया।

8. हालांकि, राज्य के लिए विद्वान अतिरिक्त लोक अभियोजक और विरोधी पक्ष संख्या- 2 के विद्वान अधिवक्ता ने जोर देकर कहा कि लिखित प्रतिवेदन में लगाए गए आरोप के अनुसार, कथित अपराध के सभी तत्व बनाए गए हैं। इसलिए, अभियुक्त द्वारा लगाए गए दुर्भावनापूर्ण आरोप गौण हो जाते हैं और पुलिस जांच के लिए कर्तव्यबद्ध है। पुलिस प्रथम सूचना प्रतिवेदन की विषय वस्तु की जाँच करें और इसलिए, अभियोजन के इस

प्रारंभिक चरण में प्रथम सूचना प्रतिवेदन को रद्द नहीं किया जा सकता है। विरोधी पक्ष संख्या -2 के विद्वान अधिवक्ता ने यह भी प्रस्तुत किया कि अभियुक्त व्यक्तियों द्वारा 2022 के बासोपट्टी थाना कांड संख्या- 02 के माध्यम से दर्ज किया गया मामला झूठा और मनगढ़ंत है और वर्तमान मामले में अपनी को बचाने के इरादे से दर्ज किया गया है। इसके अलावा, अभियुक्त पक्ष द्वारा दर्ज किए गए विवादित प्रथम सूचना प्रतिवेदन और प्रथम सूचना प्रतिवेदन अलग और विशिष्ट घटना पर आधारित है।

9. इससे पहले कि मैं पक्षों की प्रतिद्वंद्वी दलीलों पर विचार करने के लिए आगे बढ़ूं, प्रथम सूचना प्रतिवेदन को रद्द करने के संदर्भ में दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के तहत इस न्यायालय की शक्ति के दायरे और क्षेत्र की जांच करना उचित होगा।

10. धारा 482 सी. आर. पी. सी. उच्च न्यायालय की अंतर्निहित शक्ति को बचाती है और यह निम्नानुसार हैः-

> "482. **उच्च न्यायालय की अंतर्निहित शक्तियों की सुरक्षा-** इस संहिता की कोई भी बात उच्च न्यायालय की अंतर्निहित शक्तियों को सीमित या प्रभावित करने वाली नहीं मानी जाएगी जो इस संहिता के तहत किसी भी आदेश को प्रभावी बनाने के लिए या किसी भी न्यायालय की प्रक्रिया के दुरुपयोग को रोकने के लिए या अन्यथा न्याय के उद्देश्यों को सुरक्षित करने के लिए आवश्यक हो।"

11. माधवराव जीवाजीराव सिंधिया बनाम संभाजीराव चंदरोजीराव आंग्रे, [(1988) 1 एससीसी संख्या 692] के मामले में, सर्वोच्च न्यायालय की माननीय तीन-न्यायाधी शों की पीठ ने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के तहत आपराधिक कार्यवाही को रद्द करने के संबंध में निम्नलिखित निर्णय दिया है:

> "7. <u>कानूनी स्थिति अच्छी तरह से तय की गई है कि जब प्रारंभिक चरण में एक अभियोजन को रद्द करने के लिए कहा जाता है,</u>

> तो अदालत द्वारा लागू किया जाने वाला परीक्षण यह है कि क्या अनियंत्रित आरोप प्रथम दृष्टया अपराध को स्थापित करते हैं। यह न्यायालय के लिए भी है कि वह किसी विशेष मामले में दिखाई देने वाली किसी भी विशेष विशेषता को ध्यान में रखे और इस बात पर विचार करे कि क्या अभियोजन को जारी रखने की अनुमति देना समीचीन और न्याय के हित में है। यह इस आधार पर है कि अदालत का उपयोग किसी भी अप्रत्यक्ष उद्देश्य के लिए नहीं किया जा सकता है और जहां न्यायालय की राय में अंतिम दोषसिद्धि की संभावनाएँ धूमिल हैं और इसलिए, आपराधिक अभियोजन को जारी रखने की अनुमति देने से कोई उपयोगी उद्देश्य पूरा होने की संभावना नहीं है । न्यायालय किसी मामले के विशेष तथ्यों को ध्यान में रखते हुए कार्यवाही को भी रद्द कर सकती है, भले ही वह प्रारंभिक चरण में हो।
>
> (जोर दिया गया)

12. माननीय सर्वोच्च न्यायालय के द्वारा **हरियाणा राज्य बनाम भजन लाल [1992 पूरक (1) एस. एस .सी. 335] के मामले में निम्नलिखित रूप में अवलोकन दिया गया है, इस विषय पर प्रसिद्ध निर्णय** और अभी भी मैदान में है और सर्वोच्च न्यायालय सहित सभी न्यायालयों द्वारा लगातार इसका पालन किया जा रहा है। यहाँ यह इस प्रकार आयोजित किया गया हैः

> **"102.** अध्याय XIV के अधीन दण्ड प्रक्रिया संहिता के विभिन्न सुसंगत उपबंधों के निर्वचन की पृष्ठभूमि में और अनुच्छेद 226 के अधीन असाधारण शक्ति के प्रयोग से संबंधित विनिश्चयों की एक श्रृंखला में इस न्यायालय द्वारा प्रतिपादित विधि के सिद्धांतों की या दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के अधीन अंतर्निहित शक्तियों की, जिन्हें हमने ऊपर उद्धृत और पुनः प्रस्तुत किया है, हम दृष्टांत के माध्यम से ऐसे मामलों की निम्नलिखित श्रेणियां देते हैं जिनमें ऐसी शक्ति का प्रयोग या तो किसी न्यायालय की प्रक्रिया के दुरुपयोग को रोकने के लिए या अन्यथा न्याय के उद्देश्यों को सुरक्षित करने के लिए किया जा

सकता है, यद्यपि कोई भी सटीक, स्पष्ट रूप से परिभाषित और पर्याप्त रूप से मार्गदर्शक सिद्धांत या कठोर सूत्र अधिकथित करना संभव नहीं हो सकता है और असंख्य प्रकार के मामलों की विस्तृत सूची देना जिसमें ऐसी शक्ति का प्रयोग किया जाना चाहिए।

(1) जहाँ पहले पटना उच्च न्यायालय सी. आर. में आरोप लगाए गए थे। सूचना प्रतिवेदन या शिकायत, भले ही उन्हें उनके अंकित मूल्य पर लिया जाए और उनकी संपूर्णता में स्वीकार किया जाए, प्रथम दृष्टया कोई अपराध नहीं है या आरोपी के खिलाफ मामला नहीं बनता है।

(2) जहां प्रथम सूचना प्रतिवेदन में आरोप और प्रथम सूचना प्रतिवेदन के साथ अन्य सामग्री, यदि कोई हो प्राथमिकी के साथ एक संज्ञेय अपराध का खुलासा नहीं करते हैं, तो दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 155 (2) के दायरे में न्यायाधीश के आदेश के अलावा दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 156 (1) के तहत पुलिस अधिकारियों द्वारा जांच को उचित ठहराते हैं।

(3) जहां प्रथम सूचना प्रतिवेदन या शिकायत पत्र में किए गए अविवादित अभिकथन और उसके समर्थन में एकत्र किए गए साक्ष्य किसी अपराध के किए जाने का खुलासा नहीं करते हैं और अभियुक्त के विरुद्ध मामला बनाते हैं।

(4) जहां, प्रथम सूचना प्रतिवेदन में आरोप एक संज्ञेय अपराध का गठन नहीं करते हैं, लेकिन केवल एक गैर-संज्ञेय अपराध का गठन करते हैं, वहां एक पुलिस अधिकारी द्वारा मजिस्ट्रेट के आदेश के बिना किसी भी जांच की अनुमति नहीं दी जाती है जैसा कि संहिता की धारा 155 (2) के तहत विचार किया गया है।

(5) जहां प्रथम सूचना प्रतिवेदन या शिकायत में लगाए गए आरोप इतने बेतुके और स्वाभाविक रूप से असंभव हैं कि उनके आधार पर कोई भी विवेकशील व्यक्ति कभी भी इस न्यायसंगत निष्कर्ष

पर नहीं पहुंच सकता कि अभियुक्त के विरुद्ध कार्यवाही करने के लिए पर्याप्त आधार है।

(6) जहाँ दण्ड प्रक्रिया संहिता या संबंधित अधिनियम के किसी भी प्रावधान में (जिसके अधीन कोई दांडिक कार्यवाही संस्थित की जाती है) के संस्था और कार्यवाही जारी रखने पर स्पष्ट कानूनी रोक है और/या जहाँ दण्ड प्रक्रिया संहिता या संबंधित अधिनियम में पीडित पक्ष की शिकायत के लिए प्रभावशाली निवारण करने वाला कोई विशिष्ट प्रावधान है।

(7) जहां किसी आपराधिक कार्यवाही को स्पष्ट रूप से दुर्भावनापूर्ण तरीके से देखा जाता है और/या जहाँ अभियुक्तों से प्रतिशोध लेने के गुप्त उद्येश्य से दुर्भावनापूर्ण ढंग से और निजी और व्यक्तिगत द्वेष के कारण कार्यवाही शुरु की जाती है।

103. हम यह भी भी सावधानी बरतते हैं कि आपराधिक कार्यवाही को रद्द करने का कि आपराधिक कार्यवाही को निरस्त करने की शक्ति का प्रयोग बहुत संयम से और सावधानी से किया जाना चाहिए और वह भी दुर्लभतम मामलों में; ही प्रयोग किया जाना चाहिए; न्यायालय को प्रथम सूचना प्रतिवेदन या शिकायत में लगाए गए आरोपों की विश्वसनीयता या वास्तविकता या अन्यथा के रूप में जांच में सलिंलिप्त होने का कोई औचित्य नहीं है, और यह असाधारण या अंतर्निहित शक्तियां न्यायालय को अपनी मर्जी और इच्छा शक्ति के अनुसार कार्य करने का मनमाना अधिकार प्रदान नहीं करतीं हैं।

(जोर दिया गया)

13. माननीय सर्वोच्च न्यायालय के द्वारा **झांडू फार्मास्युटिकल वर्क्स लिमिटेड बनाम मोहम्मद शराफुल हक [(2005) 1 एस. सी. सी. 122]** मे निम्नलिखित रूप में देखा गया है:

"8. ... यह किसी भी कार्रवाई की अनुमति देने के लिए न्यायालय की प्रक्रिया का दुरुपयोग होगा जिसके परिणामस्वरूप अन्याय होगा और

न्याय को बढ़ावा देने में बाधा आएगी। शक्तियों का प्रयोग करते हुए, न्यायालय किसी भी कार्यवाही को रद्द करने के लिए उचित होगी यदि उसे लगता है कि इसकी शुरुआत/निरंतरता न्यायालय की प्रक्रिया का दुरुपयोग या इन कार्यवाही को रद्द करने के बराबर है अन्यथा न्याय के उद्देश्यों को पूरा करेगा। जब शिकायत द्वारा किसी अपराध का खुलासा नहीं किया जाता है, तो अदालत तथ्य के प्रश्न की जांच कर सकती है। जब किसी शिकायत को रद्द करने की मांग की जाती है, तो यह आकलन करने के लिए सामग्री को देखने की अनुमति है कि शिकायतकर्ता ने क्या आरोप लगाया है और क्या कोई अपराध बनाया गया है, भले ही आरोप पूरी तरह से स्वीकार किए गए हों।

(जोर दिया गया)

14. माननीय सर्वोच्च न्यायालय के द्वारा उड़ीसा राज्य बनाम सरोज कुमार साहू में [(2005) 13 एस. सी. सी. 540] के मामले में आपराधिक विविध की दण्ड प्रक्रिया संहिता की धरारा 482 का दायरा ओर सीमा का निम्नलिखित अवलोकन किया गया है:

"8. .....धारा के तहत शक्तियों का प्रयोग करते समय, न्यायालय अपील या पुनरीक्षण के न्यायालय के रूप में कार्य नहीं करता है। धारा के तहत अंतर्निहित अधिकार क्षेत्र, हालांकि व्यापक है, का उपयोग संयम, सावधानी और सावधानी के साथ किया जाना चाहिए और केवल तभी जब इस तरह का अभ्यास धारा में विशेष रूप से निर्धारित परीक्षणों द्वारा उचित ठहराया जाता है। जिनके प्रशासन में केवल अदालतें मौजूद हैं, उनके लिए वास्तविक और पर्याप्त न्याय करने के लिए पूर्व ऋण न्याय का प्रयोग किया गया। न्याय की प्रगति के लिए न्यायालय का अधिकार मौजूद है और यदि उस अधिकार का दुरुपयोग प्रस्तुत का कोई प्रयास किया जाता है ताकि अन्याय पैदा किया जा सके, तो न्यायालय के पास दुरुपयोग को रोकने की शक्ति है। यह किसी भी कार्रवाई की अनुमति देने के लिए अदालत की प्रक्रिया का दुरुपयोग होगा जिसके परिणामस्वरूप अन्याय होगा और न्याय को बढ़ावा देने में बाधा आएगी। शक्तियों का प्रयोग करते हुए न्यायालय किसी भी कार्यवाही को रद्द

करने के लिए उचित होगा यदि वह पाता है कि इसकी शुरुआत/निरंतरता न्यायालय की प्रक्रिया का दुरुपयोग या इन कार्यवाही को रद्द करने के बराबर है अन्यथा न्याय के उद्देश्यों को पूरा करेगा। जब प्रतिवेदन द्वारा किसी अपराध का खुलासा नहीं किया जाता है, तो अदालत तथ्य के प्रश्न की जांच कर सकती है। जब किसी रिपोर्ट को रद्द करने की मांग की जाती है, तो यह आकलन करने के लिए सामग्री को देखने की अनुमति है कि रिपोर्ट में क्या आरोप लगाया गया है और क्या कोई अपराध बनाया गया है, भले ही आरोप पूरी तरह से स्वीकार किए गए हों।

(जोर दिया गया)

15. माननीय सर्वोच्च न्यायालय के द्वारा **इंडियन ऑयल कॉर्पोरेशन बनाम एनईपीसी इंडिया लिमिटेड, [(2006) 6 एससीसी 736],** के मामले में निम्नलिखित अवलोकन किया गया है:

"12. ..... हमारे उद्देश्य के लिए प्रासंगिक सिद्धांत हैं:

(i) एक शिकायत को रद्द किया जा सकता है जहां शिकायत में लगाए गए आरोप, भले ही उन्हें उनके अंकित मूल्य पर लिया जाए और उनकी संपूर्णता में स्वीकार किया जाए, प्रथम दृष्टया कोई अपराध नहीं है या आरोपी के खिलाफ कथित मामला नहीं है।

इस उद्देश्य के लिए, शिकायत की समग्र रूप से जांच की जानी चाहिए, लेकिन आरोपों के गुण-दोष की जांच किए बिना। शिकायत को रद्द करने के अनुरोध की जांच करते समय न तो विस्तृत जांच की जाती है और न ही सामग्री का सावधानीपूर्वक विश्लेषण और न ही शिकायत में लगाए गए आरोपों की विश्वसनीयता या वास्तविकता का आकलन किया जाता है।

(ii) एक शिकायत को भी रद्द किया जा सकता है जहां यह न्यायालय की प्रक्रिया का स्पष्ट दुरुपयोग है, जैसे कि जब आपराधिक कार्यवाही

प्रतिशोध लेने या नुकसान पहुंचाने के लिए दुर्भावना/द्वेष के साथ शुरू की गई है, या जहां आरोप बेतुके हैं और स्वाभाविक रूप से असंभव हैं।

(iii) हालांकि, रद्द करने की शक्ति का उपयोग किसी वैध अभियोजन को दबाने या रोकने के लिए नहीं किया जाएगा। बिजली का उपयोग संयम से और बहुत सावधानी के साथ किया जाना चाहिए।

(iv) कथित अपराध के कानूनी घटकों को मौखिक रूप से पुनः प्रस्तुत करने के लिए शिकायत की आवश्यकता नहीं है। यदि शिकायत में आवश्यक तथ्यात्मक आधार रखा गया है, केवल इस आधार पर कि कुछ अव्ययवों को विस्तार से नहीं बताया गया है, तो कार्यवाही को रद्द नहीं किया जाना चाहिए। शिकायत को रद्द करने की अनुमति केवल तभी दी जाती है जब शिकायत में उन बुनियादी तथ्यों की कमी हो, जो अपराध का पता लगाने के लिए बिल्कुल आवश्यक हैं।

(v) तथ्यों का एक दिया गया समूह यह साबित कर सकता हैः (ए) विशुद्ध रूप से एक दीवानी गलती; या (बी) विशुद्ध रूप से एक आपराधिक अपराध; या (सी) एक दीवानी गलती के रूप में एक आपराधिक अपराध भी। एक वाणिज्यिक लेनदेन या एक संविदात्मक विवाद, नागरिक कानून में उपचार की मांग के लिए कार्रवाई का कारण प्रस्तुत करने के अलावा, एक आपराधिक अपराध भी शामिल हो सकता है। चूँकि दीवानी कार्यवाही की प्रकृति और दायरा आपराधिक कार्यवाही से अलग है, केवल यह तथ्य कि शिकायत एक वाणिज्यिक लेनदेन या अनुबंध के उल्लंघन से संबंधित है, जिसके लिए एक दीवानी उपचार उपलब्ध है या जिसका लाभ उठाया गया है, अपने आप में आपराधिक कार्यवाही को रद्द करने का आधार नहीं है। परीक्षण यह है कि शिकायत में लगाए गए आरोप आपराधिक अपराध का खुलासा करते हैं या नहीं।

13. जबकि इस मुद्दे पर, विशुद्ध रूप से दीवानी विवादों को आपराधिक मामलों में बदलने की व्यावसायिक हलकों में बढ़ती प्रवृत्ति पर ध्यान देना आवश्यक है। यह स्पष्ट रूप से एक प्रचलित धारणा के कारण है कि नागरिक कानून उपचार समय लेने वाले हैं और ऋणदाताओं/लेनदारों के

हितों की पर्याप्त रूप से रक्षा नहीं करते हैं। इस तरह की प्रवृत्ति कई पारिवारिक विवादों में भी देखी जाती है, जिससे विवाह/परिवार अपरिहार्य रूप से टूट जाते हैं। ऐसी धारणा भी है कि यदि कोई व्यक्ति किसी तरह आपराधिक अभियोजन में उलझ सकता है, तो आसन्न समझौते की संभावना बनी रहती है। दीवानी विवादों और दावों को निपटाने के किसी भी प्रयास की, जिसमें कोई आपराधिक अपराध शामिल नहीं है, आपराधिक अभियोजन के माध्यम से दबाव बनाकर निंदा की जानी चाहिए और हतोत्साहित किया जाना चाहिए।

(जोर दिया गया)

16. माननीय सर्वोच्च न्यायालय के द्वारा ऋषिपाल सिंह बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य (2014) 7 एस. सी. सी. 215 के मामले में, निम्नलिखित अवलोकन किया है:

"13. उपर्युक्त निर्णयों से जो पता चलता है वह यह कि जब प्रारंभिक चरण में किसी अभियोजन को रद्द करने के लिए कहा जाता है, तो अदालत द्वारा लागू किया जाने वाला परीक्षण यह है कि क्या शिकायत में लगाए गए अनियंत्रित आरोप प्रथम दृष्टया मामले को स्थापित करते हैं। न्यायालयों को यह देखना होगा कि क्या शिकायत को जारी रखना कानून की प्रक्रिया का दुरुपयोग है और क्या आपराधिक कार्यवाही को जारी रखने से न्याय की विफलता होती है या जब न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचता है कि इन कार्यवाही को रद्द करने से अन्यथा न्याय के उद्देश्य पूरे होंगे, न्यायालय दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा के तहत शक्ति का प्रयोग कर सकती है। प्रावधान के तहत शक्ति का प्रयोग करते समय, न्यायालयों को केवल शिकायत में अनियंत्रित आरोप को देखना होगा कि क्या प्रथम दृष्टया किसी अपराध का खुलासा करता है या नहीं, लेकिन इसे खुद को निचली अदालत में परिवर्तित नहीं करना चाहिए और तथ्य के विवादित प्रश्नों पर ध्यान देना चाहिए।"

(जोर दिया गया)

17. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निहारिका इन्फ्रास्ट्रक्चर प्राइवेट लिमिटेड बनाम महाराष्ट्र राज्य और अन्य, (2021) 19 एस. सी. सी. 401, के मामले में दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 या भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत दायरे और क्षेत्र पर व्यापक रूप से विचार किया है और सिद्धांतों को संक्षेप में इस प्रकार प्रस्तुत किया गया है:

> **"13.** इस न्यायालय के उपर्युक्त निर्णयों सहित ख्वाजा नज़ीर में प्रिवी काउंसिल के निर्णय से [राजा सम्राट बनाम ख्वाजा नजीर अहमद, 1944 एस. सी. सी. ऑनलाइन पीसी 29:(1943-44) 71 आई ए 203:ए. आई. आर. 1945 पी. सी. 18], कानून के निम्नलिखित सिद्धांत उभरते हैं:
>
> **13.1.** पुलिस के पास संज्ञेय अपराधों की जांच करने के लिए संहिता के अध्याय XIV में निहित दंड प्रक्रिया संहिता के प्रासंगिक प्रावधानों के तहत वैधानिक अधिकार और कर्तव्य है।
>
> **13.2.** न्यायालय संज्ञेय अपराधों की किसी भी जांच को विफल नहीं करेंगे।
>
> **13.3.** हालांकि, ऐसे मामलों में जहां प्रथम सूचना प्रतिवेदन में किसी भी संज्ञेय अपराध या किसी भी प्रकार के अपराध का खुलासा नहीं किया जाता है, न्यायालय जांच जारी रखने की अनुमति नहीं देगा।
>
> **13.4.** रद्द करने की शक्ति का प्रयोग "दुर्लभतम से दुर्लभतम मामलों" में सावधानीपूर्वक किया जाना चाहिए।" (दुर्लभतम मामले अपने आप में मानक हैं। दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के तहत रद्द करने के लिए उस मानदंड के साथ भ्रमित नहीं होना चाहिए जो मृत्युदंड के संदर्भ में तैयार किया गया है, जैसा कि इस न्यायालय द्वारा पहले समझाया गया है।
>
> **13.5.** प्रथम सूचना प्रतिवेदन/शिकायत की जांच करते समय, जिसे रद्द करने की मांग की जाती है, न्यायालय प्रथम सूचना

प्रतिवेदन/शिकायत में लगाए गए आरोपों की विश्वसनीयता या वास्तविकता या अन्यथा के रूप में जांच शुरू नहीं कर सकता है।

13.6. आपराधिक कार्यवाही को प्रारंभिक चरण में बाधित नहीं किया जाना चाहिए।

13.7. शिकायत/प्रथम सूचना प्रतिवेदन को रद्द करना एक सामान्य नियम की तुलना में एक अपवाद और दुर्लभता होनी चाहिए।

13.8. आम तौर पर, अदालतों को पुलिस के अधिकार क्षेत्र को हड़पने से रोक दिया जाता है, क्योंकि राज्य के दो अंग गतिविधियों के दो विशिष्ट क्षेत्रों में काम करते हैं। हालाँकि, न्यायालय की अंतर्निहित शक्ति को दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के द्वारा न्याय के उद्देश्यों को सुरक्षित करने या उपर्युक्त प्रक्रिया को रोकने के लिए मान्यता दी गई है।

13.9. न्यायपालिका और पुलिस के कार्य पूरक हैं, परस्पर व्याप्त नहीं हैं।

13.10. असाधारण मामलों को छोड़कर जहां गैर-हस्तक्षेप के परिणामस्वरूप न्याय की विफलता होगी, न्यायालय और न्यायिक प्रक्रिया को अपराधों की जांच के चरण में हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए।

13.11. न्यायालय की असाधारण और अंतर्निहित शक्तियां न्यायालय को अपनी सनक या सनक के अनुसार कार्य करने के लिए मनमाना अधिकार क्षेत्र प्रदान नहीं करती हैं।

13.12. प्रथम सूचना प्रतिवेदन एक विश्वकोश नहीं है जिसे प्रतिवेदित किए गए अपराध से संबंधित सभी तथ्यों और विवरणों का खुलासा करना चाहिए। इसलिए, जब पुलिस द्वारा जाँच जारी है, तो न्यायालय को प्रथम सूचना प्रतिवेदन में लगाए गए आरोपों के गुण-दोष में नहीं जाना चाहिए। पुलिस को जांच पूरी करने की अनुमति दी जानी चाहिए। अस्पष्ट तथ्यों के आधार पर निष्कर्ष निकालना जल्दबाजी होगी कि शिकायत/प्रथम सूचना प्रतिवेदन जांच के योग्य नहीं है या यह कानून

की प्रक्रिया का दुरुपयोग है। जाँच के दौरान या बाद में, यदि जाँच अधिकारी को पता चलता है कि शिकायतकर्ता द्वारा किए गए आवेदन में कोई सार नहीं है, तो जाँच अधिकारी विद्वान मजिस्ट्रेट के समक्ष एक उचित प्रतिवेदन /सारांश दाखिल कर सकता है, जिस पर ज्ञात प्रक्रिया के अनुसार विद्वान मजिस्ट्रेट द्वारा विचार किया जा सकता है।

13.13. दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के तहत शक्ति बहुत व्यापक है, लेकिन व्यापक शक्ति प्रदान करने के लिए न्यायालय को सतर्क रहने की आवश्यकता है। यह न्यायालय पर एक कठिन और अधिक मेहनती कर्तव्य डालता है।

13.14. हालाँकि, साथ ही, न्यायालय, यदि वह उचित समझता है, तो रद्द करने और कानून द्वारा लगाए गए आत्म-संयम, विशेष रूप से मानकों को ध्यान में रखता है। आर. पी. कपूर [आर. पी. कपूर बनाम पंजाब राज्य, 1960 एस. सी. सी. ऑनलाइन एस. सी. 21 में इस न्यायालय द्वारा निर्धारित मापदंडःप्रथम सूचना प्रतिवेदन . 1960 एस. सी. 866] और भजन लाल [हरियाणा राज्य बनाम भजन लाल, 1992 सप्लीमेंट (1) एस. सी. सी. 335:1992 एस. सी. सी. (सी. आर. आई.) 426] के पास प्रथम सूचना प्रतिवेदन ./शिकायत को रद्द करने का अधिकार क्षेत्र है।

13.15. जब कथित अभियुक्त द्वारा प्रथम सूचना प्रतिवेदन को रद्द करने का अनुरोध किया जाता है, तो न्यायालय को दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के तहत शक्ति का प्रयोग करता है, तो केवल इस बात पर विचार करना होता है कि क्या प्रथम सूचना प्रतिवेदन में आरोप एक संज्ञेय अपराध के होने का खुलासा करते हैं या नहीं और गुण-दोष पर विचार करने की आवश्यकता नहीं है कि क्या आरोप एक संज्ञेय अपराध बनाते हैं या नहीं और अदालत को जांच एजेंसी/पुलिस को प्रथम सूचना प्रतिवेदनमें आरोपों की जांच करने की अनुमति देनी होती है।"

(जोर दिया गया)

18. माननीय सर्वोच्च न्यायालय के द्वारा महेंद्र के. सी. बनाम कर्नाटक राज्य और एक अन्य, (2022) 2 एस. सी. सी. 129 के मामले में, निम्नलिखित अवलोकन किया गया है:

> **"22.** उपर्युक्त उदाहरण के आधार पर, उच्च न्यायालय को दूसरे प्रतिवादी-अभियुक्त के खिलाफ दर्ज प्राथमिकी को रद्द करने के लिए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के तहत अपनी शक्ति का प्रयोग करते हुए निम्नलिखित दो परीक्षणों को लागू करना चाहिए थाः (i) क्या शिकायत में लगाए गए आरोप प्रथम दृष्टया अपराध हैं; और (ii) क्या आरोप इतने असंभव हैं कि एक विवेकपूर्ण व्यक्ति इस निष्कर्ष पर नहीं पहुंच पाएगा कि शिकायत के साथ आगे बढ़ने के लिए पर्याप्त आधार है।"
>
> (जोर दिया गया)

19. माननीय सर्वोच्च के द्वारा राज्य बनाम एम. मैरिडोस और अन्य (2023) 4 एस. सी. सी. 338 के मामले में, निम्नलिखित अवलोकंन किया गया है:

> **"8.** अन्यथा भी, यह कानून की एक स्थिर स्थिति है कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के तहत शक्तियों का प्रयोग करते हुए, उच्च न्यायालय को लघु परीक्षण करने की आवश्यकता नहीं है। उस स्तर पर जिस पर विचार करने की आवश्यकता है, वह है प्रथम सूचना प्रतिवेदन में आरोपों और आरोपों की प्रकृति और क्या प्रथम सूचना प्रतिवेदनमें कथन/आरोप प्रथम दृष्टया संज्ञेय अपराध के होने का खुलासा करते हैं या नहीं।
>
> **11.** कानून की तय स्थिति के अनुसार, जांच एजेंसी को जांच करने का अधिकार दिया गया है और जांच एजेंसी को जांच पूरी करने के लिए उचित समय दिया जाना चाहिए और जाँच एजेंसी जाँच तब तक करेगी जब तक कि यह नहीं पाया जाता है किहम प्रथम सूचना प्रतिवेदन में आरोप किसी भी संज्ञेय अपराध का खुलासा नहीं करते हैं या शिकायत किसी भी कानून द्वारा वर्जित है।
>
> (जोर दिया गया)

20. माननीय सर्वोच्च न्यायालय, कई अवसरों पर, प्रथम सूचना प्रतिवेदन को रद्द करने के संदर्भ में प्रथम सूचना प्रतिवेदन या आपराधिक शिकायत दर्ज करने के पीछे दुर्भावनापूर्ण या गुप्त उद्देश्य के आरोप पर विचार किया है। इस संबंध में **भजन लाल** (उपर्युक्त) मामले में **माननीय सर्वोच्च न्यायालय** ने पहले ही कहा है कि जहां एक आपराधिक कार्यवाही को स्पष्ट रूप से दुर्भावनापूर्ण तरीके से देखा जाता है और/या जहां कार्यवाही दुर्भावनापूर्ण तरीके से आरोपी से बदला लेने के लिए एक गुप्त उद्देश्य के साथ शुरू की जाती है और निजी और व्यक्तिगत द्वेष के कारण उसके बावजूद, उच्च न्यायालय दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के तहत उसके अंतर्निहित अधिकार क्षेत्र को लागू कर सकता है। या आपराधिक कार्यवाही को रद्द करने के लिए संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत अधिकार क्षेत्र लिख सकते हैं। यह भी उल्लेखनीय है कि **भजन लाल** के मामले (ऊपर) में **माननीय सर्वोच्च न्यायालय** ने रद्द करने से इनकार कर दिया है, प्रथम सूचना प्रतिवेदन/सूचक धरम पाल के अभियुक्त के साथ शत्रुतापूर्ण संबंधों के बावजूद।

21. सर्वोच्च न्यायालय को बिहार राज्य बनाम पी. पी. शर्मा, 1992 सप्लीमेंट (1) एस. सी. सी. 222 वाले मामले में, फिर से यह अवसर मिला था कि दुर्भावनापूर्ण या गुप्त उद्देश्य के मुद्दे पर विचार करें और निम्नलिखित रूप में निर्णय किया थाः

> "22. <u>सत्ता के दुर्भावनापूर्ण प्रयोग का सवाल यह तभी महत्वपूर्ण हो जाता है जब आपराधिक अभियोजन बाहरी विचारों और अनधिकृत उद्देश्य के लिए शुरू किया जाता है।</u> इस मामले में यह दिखाने के लिए कोई सामग्री नहीं है कि जिस तारीख को आर. के. सिंह द्वारा प्राथमिकी दर्ज की गई थी, वह पूर्वाग्रह से सक्रिय था या दुर्भावनापूर्ण तरीके से कार्य करने का कोई कारण था। प्रत्यर्थियों के खिलाफ मामला दर्ज करने का प्रमुख उद्देश्य प्राथमिकी में निहित आरोपों की जांच करना और न्यायालय के समक्ष आरोप पत्र पेश करने के लिए आरोपों के समर्थन में पर्याप्त सामग्री होने की स्थिति में जांच करना था। यह दिखाने के लिए

कोई सामग्री नहीं है कि मामला दर्ज करने का प्रमुख उद्देश्य उत्तरदाताओं का चरित्र हनन या उन्हें परेशान करना और अपमानित करना था। बिहार राज्य बनाम जे. ए. सी. सल्धाना [(1980) 1 एस. सी. सी. 554] के मामले में इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है कि जब सूचना पुलिस थाने में दर्ज की जाती है और कोई अपराध दर्ज किया जाता है, तो सूचक की दुर्भावना गौण महत्व की होगी। यह जाँच के दौरान एकत्र की गई सामग्री है जो अभियुक्त व्यक्ति के भाग्य का फैसला करती है। हरियाणा राज्य बनाम सीएच भजन लाल (1992) सप्लीमेंट (1) एस. सी. सी. 335] ने राज्य सरकार को चौधरी के खिलाफ नए सिरे से जांच करने की अनुमति दी। भजन लाल इस तथ्य के बावजूद कि धर्म पाल के कहने पर अभियोजन दर्ज किया गया था जो भजन लाल के प्रति शत्रुतापूर्ण था।

(जोर दिया गया)

22. माननीय सर्वोच्च न्यायालय को महाराष्ट्र राज्य बनाम ईश्वर पिराजी कल्पत्री, (1996) 1 एस. सी. सी. 542 के मामले में इस बात पर विचार करने का अवसर मिला था कि फिर से दुर्भावनापूर्ण या गुप्त उद्देश्य के मुद्दे पर विचार करने का अवसर मिला और इस बिंदु पर निम्नलिखित निर्णय दिया गया:

"22. वास्तव में, वर्तमान जैसे मामले में दुर्भावना का सवाल बिल्कुल भी प्रासंगिक नहीं है। यदि जो शिकायत की गई है वह सही है और एक अपराध किया गया था जिसे कानून की अदालत में स्थापित करना होगा, तो इसका कोई परिणाम नहीं है कि शिकायतकर्ता एक ऐसा व्यक्ति था जो शत्रुतापूर्ण था या वह दुर्भावना का दोषी था। यदि अपराध या दुराचार को स्थापित करने वाले तत्व मौजूद हैं, तो अभियोजन केवल इसलिए विफल नहीं हो सकता है क्योंकि शिकायतकर्ता या अभियुक्त के खिलाफ अभियोजन पक्ष की दुश्मनी थी। शुद्धता का न्याय करते समय दुर्भावनापूर्ण आरोप प्रासंगिक हो सकते हैं। आरोप लगाते समय या साक्ष्य की जांच करते समय। लेकिन केवल यह तथ्य कि शिकायतकर्ता दुर्भावना का दोषी है, अभियोजन को रद्द करने का कोई आधार नहीं होगा।

तत्काल मामले में, तथ्यों के विशिष्ट कथन किए गए हैं जिसमें यह आरोप लगाया गया था कि प्रतिवादी के पास असमान रूप से बड़ी संपत्ति थी। प्रत्यर्थी को दंडित करने की दृष्टि से प्रत्यर्थी के खिलाफ अभियोजन शुरू करने में अपीलार्थी का दुर्भावनापूर्ण इरादा सक्षम क्षेत्राधिकार के न्यायालय को उस साक्ष्य की जांच करने से रोकने का कारण नहीं हो सकता है जो उसके सामने लाया जा सकता है, इस निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए कि क्या कोई अपराध किया गया था या नहीं।

(जोर दिया गया)

23. माननीय सर्वोच्च न्यायालय के द्वारा निम्नलिखित निर्णयों में भी इसी तरह का विचार व्यक्त किया गया हैः

(i) **विनीत कुमार बनाम उत्तर प्रदेश राज्य,**
(2017) 13 एससीसी 369;

(ii) **ज़ांडू फार्मास्युटिकल वर्क्स लिमिटेड बनाम मो० शरफुल हक,**
(2005) 1 एस. सी. सी. 122;

(iii) **ए. पी. राज्य बनामगोलकोंडा लिंग स्वामी,**
(2004) 6 एससीसी 522;

(iv) **कर्नाटक राज्य बनाम एम. देवेंद्रप्पा,**
(2002) 3 एस. सी. सी 89.

24. माननीय सर्वोच्च न्यायालय के द्वारा **महमूद अली और अन्य (नाम उत्तर प्रदेश प्रदेश राज्य और अन्य,** (2023) 15 एस. सी. सी. 488, के मामले में निम्नलिखित अवलोकन किया गया है:

"11. इस स्तर पर, हम कुछ महत्वपूर्ण अवलोकन करना चाहेंगे। जब भी कोई अभियुक्त दण्ड प्रक्रिया संहिता (सी. आर. पी. सी.) की धारा 482 के तहत अंतर्निहित शक्तियों या संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत असाधारण अधिकार क्षेत्र का उपयोग करके प्रथम सूचना प्रतिवेदन को रद्द करने के लिए न्यायालय के समक्ष आता है या आपराधिक कार्यवाही को अनिवार्य रूप से इस आधार पर रद्द कर दिया जाता है कि ऐसी कार्यवाही स्पष्ट रूप से तुच्छ या परेशान करने वाली

होती है ,या प्रतिशोध लेने के लिए गुप्त उद्देश्य से शुरू की जाती है, तो ऐसी परिस्थितियों में अदालत का कर्तव्य है कि वह प्रथम सूचना प्रतिवेदनको सावधानी से और थोड़ी अधिक बारीकी से देखे।

12. हम ऐसा इसलिए कहते हैं क्योंकि एक बार जब शिकायतकर्ता व्यक्तिगत प्रतिशोध आदि के लिए आरोपी के खिलाफ आगे बढ़ने का फैसला करता है तो वह को सुनिश्चित करेगा कि सभी आवश्यक अभिवचनों के साथ प्रथम सूचना प्रतिवेदन /शिकायत का मसौदा बहुत अच्छी तरह से तैयार किया गया है। शिकायतकर्ता यह सुनिश्चित करेगा कि प्रथम सूचना प्रतिवेदन/शिकायत में किए गए कथन ऐसे हों कि वे कथित अपराध का गठन करने के लिए सब चीज आवश्यक सामग्री का खुलासा करें। इसलिए, न्यायालय के लिए केवल यह सुनिश्चित करने के उद्देश्य से कि कथित अपराध का गठन करने के लिए आवश्यक सामग्री का खुलासा किया गया है या नहीं, केवल प्रथम सूचना प्रतिवेदन/शिकायत में किए गए कथनों पर गौर करना पर्याप्त नहीं होगा।

13. तुच्छ या परेशान करने वाली कार्यवाहियों में, न्यायालय का कर्तव्य है कि वह मामले के अभिलेख से उपजी कई अन्य उपस्थित परिस्थितियों को अभिकथनों के अलावा देखे और यदि आवश्यक हो, तो उचित सावधानी और सावधानी के साथ पंक्तियों के बीच पढ़ने का प्रयास करे। न्यायालय को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 या संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत अपने अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करते समय खुद को केवल मामले के चरण तक ही सीमित रखने की आवश्यकता नहीं है, बल्कि उसे मामले की शुरुआत/पंजीकरण के साथ-साथ जांच के दौरान एकत्र की गई सामग्री की समग्र परिस्थितियों को ध्यान में रखने का अधिकार है। उदाहरण के लिए हाथ में मामला लें। इस अवधि में कई प्राथमिकियां दर्ज की गई हैं। यह ऐसी परिस्थितियों की पृष्ठभूमि में है कि कई प्राथमिकियों का पंजीकरण महत्वपूर्ण है, जिससे निजी या व्यक्तिगत द्वेष से बदला लेने का मुद्दा आकर्षित होता है जैसा कि आरोप लगाया गया है।

(जोर दिया गया)

25. इसलिए, वैधानिक प्रावधानों और मामले के कानूनों से यह पता चलता है कि प्रथम सूचना प्रतिवेदन को रद्द किया जा सकता है यदि प्रथम सूचना प्रतिवेदन या शिकायत में लगाए गए निराधार आरोप पुलिस द्वारा जांच को उचित ठहराते हुए संज्ञेय अपराध का खुलासा नहीं करते हैं या जहां प्रथम सूचना प्रतिवेदन में लगाए गए आरोप इतने बेतुके और स्वाभाविक रूप से असंभव हैं जिसके आधार पर कोई भी विवेकपूर्ण व्यक्ति कभी भी इस निष्कर्ष पर नहीं पहुंच सकता है कि आरोपी के खिलाफ कार्यवाही के लिए पर्याप्त आधार है या जहां एक स्पष्ट कानूनी प्रतिबंध है या जहां किसी प्रावधान में क्रिमिनल दंड प्रक्रिया संहिता या संबंधित अधिनियम के तहत कायर्यवाही की शुरुआत या जारी रखने के लिए सप्पष्ट कानूनी रोक लगाई गई हो,या जहां कोई आपराधिक कार्यवाही सष्पष्ट रूप से दुर्भावना या किसी निजी और लयतव्यक्तिगत दव्वेष के कारण अभिययुक्त पर प्रतिशोध लेने और उसे तंग करने के उद्देश्य से की जा रही हो, उसे लेकर।

26. यह भी सामने आता है कि दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 या संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत शक्ति का प्रयोग करते समय, न्यायालय अपील या संशोधन न्यायालय के रूप में कार्य नहीं करता है। यह आगे सामने आता है कि प्रथम सूचना प्रतिवेदन/ शिकायत की समग्र रूप से जांच की जानी चाहिए, लेकिन आरोपों के गुण-दोष की जांच किए बिना। प्रथम सूचना प्रतिवेदन को रद्द करने के अनुरोध की जांच करते समय न तो विस्तृत जांच, न ही सामग्री का सावधानीपूर्वक विश्लेषण, न ही शिकायत में लगाए गए आरोपों की विश्वसनीयता या वास्तविकता का आकलन आवश्यक है। दूसरे शब्दों में, न्यायालय को लघु परीक्षण करने की आवश्यकता नहीं है।

27. यह भी सामने आता है कि प्रथम सूचना प्रतिवेदन एक विश्वकोश नहीं है जिसमें सभी विवरण और कथित अपराध के सभी अवयवों को शाब्दिक रूप से पुनः प्रस्तुत किया गया है। यदि आवश्यक तथ्यात्मक नींव प्रथम सूचना प्रतिवेदन/ शिकायत में रखी

जाती है, केवल इस आधार पर कि कुछ अवयवों को विस्तार से नहीं बताया गया है, तो प्रथम सूचना प्रतिवेदनको रद्द नहीं किया जा सकता है।

28. यह भी सामने आता है कि प्रथम सूचना प्रतिवेदन को रद्द करने की शक्ति है। इसका उपयोग किसी वैध अभियोजन को दबाने या रोकने के लिए नहीं किया जा सकता है। पुलिस के पास संज्ञेय अपराध के सभी पहलुओं की जांच करने का वैधानिक कर्तव्य और अधिकार है। यह भी सामने आता है कि दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 और संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत शक्ति का उपयोग संयम और प्रचुर सावधानी के साथ किया जाना चाहिए।

29. यह आगे सामने आता है कि जब प्रथम सूचना प्रतिवेदन की संस्था में अभियुक्त द्वारा दुर्भावनापूर्ण या गुप्त उद्देश्य का आरोप लगाया जाता है, तो न्यायालय इसकी जांच करने के लिए कर्तव्यबद्ध होता है और यदि यह रिकॉर्ड पर सामग्री से प्रकट होता है कि प्रथम सूचना प्रतिवेदन दुर्भावनापूर्ण और प्रतिशोध लेने के लिए गुप्त उद्देश्य से दर्ज किया गया है और आरोप तुच्छ और परेशान करने वाला है, तो न्यायालय प्रथम सूचना प्रतिवेदन को रद्द कर सकता है। हालाँकि, यदि, अनियंत्रित आरोप के अनुसार, संज्ञेय अपराध का खुलासा होता है, तो अभियोजन पक्ष को विफल नहीं किया जा सकता है। प्रारंभिक अवस्था में पुलिस को मामले की जांच करने की अनुमति दी जानी चाहिए। पुलिस के पास कथित संज्ञेय अपराध की जांच करने का वैधानिक अधिकार और कर्तव्य है और रिकॉर्ड पर सामग्री प्राप्त किए बिना दुर्भावनापूर्ण आरोप पर प्रारंभिक चरण में विचार नहीं किया जा सकता है। साक्ष्य की जांच करते समय दुर्भावनापूर्ण आरोप प्रासंगिक हो सकता है। लेकिन प्रथम सूचना प्रतिवेदन के प्रारंभिक चरण में, अभियोजन केवल दुर्भावनापूर्ण या गुप्त उद्देश्य के आरोप के कारण विफल नहीं किया जा सकता है। केवल पिछले मुकदमे या सूचक और अभियुक्त पक्ष के शतरुरुतापूर्ण सभम्बन्ध के एकमात्र आधार पर प्रथम सूचना प्रतिवेदन

को निरस्त करने का एकमात्र आधार नहीं हो सकता था। यहां तक कि **भजन लाल** मामले (उपर्युक्त) में भी, **माननीय सर्वोच्च न्यायालय** ने इस तथ्य के बावजूद कि सूचक धरम पाल के आरोपी भजन लाल के साथ शत्रुतापूर्ण संबंध थे, प्रथम सूचना प्रतिवेदन को रद्द करने से इनकार कर दिया।

30. अब, इस न्यायालय के विचार के लिए प्रश्न यह है कि क्या लिखित प्रतिवेदन /प्रथम सूचना प्रतिवेदन में किया गया अनियंत्रित आरोप संज्ञेय अपराध है और क्या प्रथम सूचना प्रतिवेदन तुच्छ, परेशान करने वाला और अभियुक्त/याचिकाकर्ता के खिलाफ प्रतिशोध लेने के दुर्भावनापूर्ण और गुप्त उद्देश्य से प्रेरित है।

31. मैं पाता हूँ कि प्रथम सूचना प्रतिवेदन भारतीय दंड संहिता की धारा 323,341,379,324,325,307,504 और 506 सह भारतीय दण्ड संहिता की धारा 34 के साथ पठित और अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम, 1989 की धारा 3 (i) (r) (s)/3 (2) (va) के तहत दंडनीय अपराध के लिए दर्ज किया गया है और यदि आरोप को इसकी सच्चाई में जाए बिना अंकित मूल्य पर लिया जाता है, तो कोई भी आसानी से पा सकता है कि भारतीय दण्ड संहिता की धारा 323, 341, 379, 324, 325, 307, 504, 506 सह पठित भारतीय दण्ड संहिता की धारा 34 के तहत दंडनीय अपराध किया गया है।

32. हालाँकि, इससे पहले कि मैं विचार करूं कि क्या लिखित प्रतिवेदन में किया गया अनियंत्रित आरोप अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम, 1989 के तहत कोई अपराध है। इस संबंध में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा की गई टिप्पणी का उल्लेख करना अनिवार्य होगा।

33. माननीय सर्वोच्च न्यायालय के द्वारा **शशीकांत शर्मा बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, 2023 एस. सी. सी. ऑनलाइन एस. सी. 1599** के मामले में कहा गया है, जो इस प्रकार है:

> **"14.** प्रावधान के एक नंगे अवलोकन से, यह स्पष्ट है कि उपर्युक्त अपराध का गठन करने के लिए, यह आरोप होना चाहिए कि आरोपी जो अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति का सदस्य नहीं है, उसने अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति के किसी सदस्य के खिलाफ भारतीय दण्ड संहिता के तहत 10 साल या उससे अधिक की अवधि के लिए दंडनीय अपराध किया है, यह जानते हुए कि ऐसा व्यक्ति ऐसे 'समुदाय' से है।"
>
> (जोर दिया गया)

34. मानवीय सर्वोच्च न्यायालय के द्वारा **गोरिगे पेंटैया बनाम आंध्र प्रदेश राज्य, (2008) 12 एस. सी. सी. 531** के मामले में निम्नलिखित टिप्पणी की:

> "6. तत्काल मामले में, पूरी शिकायत में प्रतिवादी 3 का आरोप है कि 27-5-2004 पर, अपीलार्थी ने उनकी जाति के नाम से उनके साथ दुर्व्यवहार किया। अधिनियम की धारा 3(1)(x) के मूल तत्वों के अनुसार, शिकायतकर्ता को यह आरोप लगाना चाहिए था कि अपीलकर्ता-अभियुक्त अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति का सदस्य नहीं था और उसे (प्रतिवादी 3) जानबूझकर अपमानित किया गया था या सार्वजनिक रूप से किसी स्थान पर अपमानित करने के इरादे से आरोपी द्वारा डराया गया था। पूरी शिकायत में, कहीं भी यह उल्लेख नहीं किया गया है कि अपीलकर्ता-अभियुक्त अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति का सदस्य नहीं था और उसने जानबूझकर सार्वजनिक रूप से प्रतिवादी 3 को अपमानित करने के इरादे से अपमान या डराया-धमकाया। जब शिकायत में अपराध के मूल तत्व गायब होते हैं, तो ऐसी शिकायत को जारी रखने की अनुमति देना और अपीलार्थी को आपराधिक मुकदमे की धांधली का

सामना करने के लिए मजबूर करना पूरी तरह से अनुचित होगा, जिससे कानून की प्रक्रिया का दुरुपयोग होगा।"

(जोर दिया गया)

35. माननीय सर्वोच्च न्यायालय के द्वारा **दिनेश बनाम राजस्थान राज्य, (2006) 3 एस. सी. सी. 771** के मामले में निम्नलिखित अवलोकंन किया गया है:

"15. धारा 3 (2) (v) को लागू करने के लिए अनिवार्य शर्त यह है कि किसी व्यक्ति के खिलाफ इस आधार पर अपराध किया गया होगा कि वह व्यक्ति अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति का सदस्य है। तत्काल मामले में इस आवश्यकता को स्थापित करने के लिए कोई सबूत नहीं दिया गया है। अभियोजन पक्ष का मामला यह नहीं है कि पीड़िता के साथ बलात्कार किया गया था क्योंकि वह अनुसूचित जाति की थी। उस आशय के साक्ष्य के अभाव में, धारा 3 (2) (v) का कोई अनुप्रयोग नहीं है। यदि अत्याचार अधिनियम की धारा 3 (2) (वी) लागू होती, तो कानून के संचालन से सजा आजीवन कारावास और जुर्माना होती।

(जोर दिया गया)

36. माननीय सर्वोच्च न्यायालय के द्वारा **खुमान सिंह बनाम एम. पी. राज्य, (2020) 18 एस. सी. सी. 763** के मामले में, निम्नलिखित निर्णय दिया गया है:

"14. .....व्यक्ति के खिलाफ अपराध इस आधार पर किया गया होगा कि ऐसा व्यक्ति अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति का सदस्य है। वर्तमान मामले में, यह तथ्य कि मृतक "खंगर"-अनुसूचित जाति से संबंधित था, विवादित नहीं है। यह दिखाने के लिए कोई सबूत नहीं है कि अपराध केवल इस आधार पर किया गया था कि पीड़ित अनुसूचित जाति का सदस्य था और इसलिए, अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम की धारा 3 (2) (v) के तहत अपीलार्थी-अभियुक्त की दोषसिद्धि टिकाऊ नहीं है।

(जोर दिया गया)

37. माननीय सर्वोच्च न्यायालय के द्वारा **हितेश वर्मा बनाम उत्तराखंड राज्य, [(2020) 10 एस. सी. सी. 710]** के मामले में, निमनलिखित निर्णय दिया गया है कि:

> "18. इसलिए, अधिनियम के तहत अपराध केवल इस तथ्य पर स्थापित नहीं किया जाता है कि सूचक अनुसूचित जाति का सदस्य है, जब तक कि अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति के किसी सदस्य को इस कारण से अपमानित करने का इरादा न हो कि पीड़ित ऐसी जाति से है। वर्तमान मामले में, पक्ष भूमि के कब्जे को लेकर मुकदमा कर रहे हैं। गाली-गलौज करने का आरोप उस व्यक्ति के खिलाफ है जो संपत्ति पर अधिकार का दावा करता है। यदि ऐसा व्यक्ति होता है तो अनुसूचित जाति होने के लिए, अधिनियम की धारा 3 (1) (आर) के तहत अपराध नहीं बनाया गया है।"
>
> (जोर दिया गया)

38. माननीय सर्वोच्च न्यायालय के द्वारा **मसुम्शा हसनाशा मुसलमान बनाम महाराष्ट्र राज्य, (2000) 3 एस. सी. सी. 557,** के मामले में निम्नलिखित अवलोकन किया गया है:

> "9. अधिनियम की धारा 3(2)(v) में प्रावधान है कि जो कोई भी, अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति का सदस्य नहीं होने के नाते, दंड संहिता, 1860 के तहत किसी व्यक्ति या संपत्ति के खिलाफ इस आधार पर दस साल या उससे अधिक की अवधि के कारावास से दंडनीय कोई अपराध करता है कि ऐसा व्यक्ति अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति का सदस्य है या ऐसी संपत्ति ऐसे सदस्य की है, तो उसे आजीवन कारावास और जुर्माने से दंडित किया जाएगा। वर्तमान मामले में, इस आशय का कोई सबूत नहीं है कि अपीलार्थी ने इस आधार पर अपने खिलाफ कथित अपराध किया कि मृतक अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति का सदस्य है। अधिनियम की धारा 3 (2) (v) के प्रावधानों को आकर्षित करने के लिए, अनिवार्य शर्त यह है कि पीड़ित

एक ऐसा व्यक्ति होना चाहिए जो अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति से संबंधित हो और दंड प्रक्रिया संहिता, 1860 के तहत अपराध उसके खिलाफ इस आधार पर किया जाता है कि ऐसा व्यक्ति अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति से संबंधित है। ऐसी सामग्री के अभाव में, अधिनियम की धारा 3 (2) (v) के तहत कोई अपराध उत्पन्न नहीं होता है। इस मामले के उस दृष्टिकोण में, हम सोचते हैं कि निचली अदालत और उच्च न्यायालय दोनों इस पहलू के सार से चूक गए। इन परिस्थितियों में, निचली अदालत के साथ-साथ उच्च न्यायालय द्वारा उपर्युक्त प्रावधान के तहत दोषसिद्धि को दरकिनार कर दिया जाना चाहिए।"

(जोर दिया गया)

39. माननीय सर्वोच्च न्यायालय के द्वारा **स्वर्ण सिंह बनाम राज्य, [(2008) 8 एस. सी. सी. 435]** के मामले में निम्नलिखित अवलोकन किया गया है:

"28. प्रथम सूचना प्रतिवेदन में आरोप लगाया गया है कि पहली सूचक विनोद नागर को अपीलकर्ता 2 और 3 (उसे "चमार" कहकर) द्वारा अपमानित किया गया था, जब वह परिसर के द्वार पर खड़ी कार के पास खड़ा था। हमारी राय में, यह निश्चित रूप में सार्वजनिक दृष्टि के भीतर एक स्थान था। एक घर निश्चित रूप से सार्वजनिक दृश्य के भीतर एक जगह है। यह एक अलग मामला हो सकता था अगर कथित अपराध एक परिसर के अंदर किया गया होता, और यह भी जनता के सामने नहीं था। हालाँकि, यदि अपराध परिसर के बाहर किया जाता है, जैसे कि घर के बाहर एक लॉन में, और लॉन को सड़क या चारदीवारी के बाहर की गली से कोई देख सकता है, तो लॉन निश्चित रूप से सार्वजनिक दृश्य के भीतर एक जगह होगी। इसके अलावा, भले ही टिप्पणी किसी परिसर के अंदर की गई हो, लेकिन जनता के कुछ सदस्य वहां हैं (केवल रिश्तेदार या दोस्त नहीं) तो भी यह एक अपराध होगा क्योंकि यह जनता के सामने है। इसलिए, हमें "सार्वजनिक दृश्य के भीतर स्थान" अभिव्यक्ति को "सार्वजनिक स्थान" अभिव्यक्ति के साथ भ्रमित

नहीं करना चाहिए। एक स्थान एक निजी स्थान हो सकता है लेकिन फिर भी सार्वजनिक दृष्टिकोण के भीतर हो सकता है। दूसरी ओर, एक सार्वजनिक स्थान का अर्थ आम तौर पर एक ऐसा स्थान होगा जो सरकार या नगरपालिका (या अन्य स्थानीय निकाय) या गाँव सभा या राज्य के एक साधन के स्वामित्व या पट्टे पर है, न कि निजी व्यक्तियों या निजी निकायों द्वारा।"

(जोर दिया गया)

40. माननीय सर्वोच्च के द्वारा **उत्तर प्रदेश राज्य बनाम नरेश, [(2011) 4 एससीसी 324],** के मामले में निम्नलिखित अवलोकन किया गया है:

"32. यह एक व्यवस्थित कानूनी प्रस्ताव है कि एक प्रथम सूचना प्रतिवेदन पूरे मामले का विश्वकोश नहीं है। हो सकता है कि इसमें सभी विवरण न हों और न ही इसकी आवश्यकता हो।"

(जोर दिया गया)

41. माननीय सर्वोच्च न्यायालय के द्वारा **आशाबाई मछिंद्र अधगले बनाम महाराष्ट्र राज्य, (2009) 3 एस. सी. सी. 789]** के मामले में निम्नलिखित अवलोकन किया गया है:

"10. यह दोहराने की आवश्यकता नहीं है कि प्रथम सूचना प्रतिवेदन के विश्वकोश होने की उम्मीद नहीं है। जैसा कि अपीलार्थी के विद्वान वकील द्वारा उचित रूप से तर्क दिया गया है कि क्या अभियुक्त अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति से संबंधित है, जब मामले की जाँच की जा रही हो तो इस पर गौर किया जा सकता है। .....

12. जाँच के दौरान तथ्यों का पता लगाने के बाद जाँच अधिकारी के लिए यह दर्ज करना खुला है कि अभियुक्त या तो अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति से संबंधित है या नहीं। अंतिम राय बनने के बाद, यह अदालत के लिए खुला है कि वह या तो इसे स्वीकार करे या संज्ञान

> ले। भले ही आरोप पत्र आरोप पर विचार के समय दायर किया गया, अभियुक्त के लिए यह अदालत के ध्यान में लाने के लिए खुला है कि सामग्री से यह नहीं पता चलता है कि अभियुक्त अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति से संबंधित नहीं है। भले ही अभियोग परीक्षण के समय तैयार किया गया हो, यह दिखाने के लिए सामग्री रखी जा सकती है कि आरोपी या तो अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति से संबंधित है या नहीं।"

(जोर दिया गया)

42. इस प्रकार, यह सामने आता है कि अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम, 1989 के तहत दंडनीय अपराध का गठन करने के लिए, यह आरोप होना चाहिए कि अभियुक्त अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति समुदाय के अलावा अन्य समुदाय से है और उसने पीड़ित के खिलाफ अपराध किया है क्योंकि वह अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति समुदाय से है। अपराध सार्वजनिक रूप से किसी स्थान पर भी किया जाना चाहिए था। यद्यपि प्रथम सूचना प्रतिवेदन कथित अपराध के सभी विवरणों को रखने के लिए एक विश्वकोश नहीं है, लेकिन आरोप पत्र के साथ पढ़ी गई प्रथम सूचना प्रतिवेदन में कथित अपराध के सभी तत्व होने चाहिए, जिसमें विफल रहने पर आपराधिक कार्यवाही को रद्द किया जा सकता है। इसी तरह, आपराधिक शिकायत के मामले में, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 200 के तहत जांच के दौरान शिकायतकर्ता और उसके गवाहों के बयानों के साथ पढ़ी गई शिकायत को कथित अपराध के सभी तत्वों को पूरा करना चाहिए, जिसमें विफल रहने पर आपराधिक कार्यवाही जारी रखना न्यायालय की प्रक्रिया का दुरुपयोग और न्याय की विफलता होगी।

43. हाथ में मामले पर आते हुए, मैं पाता हूँ कि सूचक के हरिजन होने या उसे अपमानित करने के इरादे से अनुसूचित जाति का सदस्य होने के कारण सूचक को अपराध के अधीन किया गया है और यह अपमान सह-ग्रामीणों की सार्वजनिक दृष्टि से हुआ

है। इसलिए, उपर्युक्त आरोप को ध्यान में रखते हुए, अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति अधिनियम के तहत प्रथम दृष्टया अपराध बनाया जाता है।

44. हालांकि, यह पाया जा सकता है कि लिखित प्रतिवेदन/प्रथम सूचना प्रतिवेदन में कोई सीधा आरोप नहीं है कि आरोपी व्यक्ति/याचिकाकर्ता अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति समुदायों के अलावा अन्य लोगों से संबंधित हैं, लेकिन अगर कोई इन पंक्तियों के बीच पड़ता है, तो पाया जाता है कि कथित तथ्यों और परिस्थितियों के अनुसार स्पष्ट निहितार्थ/संकेत है कि आरोपी/याचिकाकर्ता अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति समुदाय के अलावा अन्य समुदाय के हैं। यहां यह बताना भी प्रासंगिक है कि प्रथम सूचना प्रतिवेदन एक विश्वकोश नहीं है जिसमें आरोप के सभी विवरण हैं और यह जांच अधिकारी के लिए खुला है कि वह अभियुक्तों/याचिकाकर्ताओं की सामाजिक स्थिति के बारे में जांच करे और यह दर्ज करे कि वे अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति समुदाय के अलावा अन्य समुदाय से हैं या नहीं।

45. यहाँ तक कि सूचक और आरोपी पक्ष के बीच शत्रुतापूर्ण संबंधों के कारण विवादित प्रथम सूचना प्रतिवेदन दर्ज करने में सूचक के दुर्भावनापूर्ण या गुप्त उद्देश्य का आरोप भी लगाया जाता है, वह इस प्रारंभिक चरण में याचिकाकर्ताओं की मदद नहीं कर सकता है। जाँच के बाद ही न्यायालय अभियुक्त/याचिकाकर्ताओं के इस तरह के आरोप की जाँच करने की स्थिति में हो सकता तथा प्रथम सूचना प्रतिवेदन को रद्द करने के लिए केवल पिछली मुकदमेबाजी या पक्षों के बीच शत्रुतापूर्ण शर्तें ही एकमात्र आधार नहीं हो सकती हैं, कथित संज्ञेय अपराध के बारे में सच्चाई का पता लगाने के लिए अनुसंधान का अनुसरण करना होगा। यह बताया जा सकता है कि माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने भजन लाल मामले (उपर्युक्त) में प्रथम सूचना प्रतिवेदन को रद्द करने से इनकार कर दिया था, इस तथ्य के

बावजूद कि सूचक धर्मपाल के आरोपी भजन लाल के साथ शत्रुतापूर्ण संबंध थे और उन्होंने नए सिरे से अनुसंधान की अनुमति दी थी।

46. इसलिए, उपर्युक्त तथ्यों और परिस्थितियों को देखते हुए, मुझे वर्तमान याचिका में कोई योग्यता नहीं मिलती है और तदनुसार, इसे खारिज कर दिया जाता है।

(जितेंद्र कुमार, न्यायमूर्ति)

चंदन/एस. अली-

खंडन (डिस्क्लेमर)- स्थानीय भाषा में निर्णय के अनुवाद का आशय, पक्षकारों को इसे अपनी भाषा में समझने के उपयोग तक ही सीमित है और अन्य प्रयोजनार्थ इसका उपयोग नही किया जा सकता । समस्त व्यवहारिक, कार्यालयी, न्यायिक एवं सरकारी प्रयोजनार्थ, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा साथ ही निष्पादन तथा कार्यान्वयन के प्रयोजनार्थ अनुमान्य होगा।